शिक्षा में समावेश की राह में रुकावटें

ऐनी जॉन

स्कूल खुले हुए एक माह हो चुका था। अपर किण्डरगार्टन की शिक्षिका श्रीमती जी. चिन्तित थीं, "मैं जो भी कहूँ, एस कुछ भी नहीं समझती, और मेरी समझ में नहीं आता कि उसे कैसे पढ़ाऊँ। वह अपने आसपास के दूसरे बच्चों से नकल कर लेती है। खेल के समय में, वह अलग खड़ी रहती है और दूसरों को खेलते देखती रहती है पर खुद शामिल नहीं होती।" यह जिस बच्ची की बात है उसे शिक्षा के अधिकार अधिनियम (आर.टी.ई.एक्ट) के तहत स्कूल में प्रवेश दिया गया था, पर वह अँग्रेजी नहीं समझती थी। अँग्रेजी अधिकांश निजी स्कूलों में शिक्षा का माध्यम है। इस लेख में मैंने 'निजी स्कूलों' शब्दों का प्रयोग उन स्कूलों के लिए किया है जिनमें आर.टी.ई.एक्ट को लागू करवाया गया है। उसकी शिक्षिका को समझ में नहीं आता था कि वह इस परिस्थिति का समाधान कैसे करे!

यह और ऐसी ही अन्य चिन्ताएँ स्कूली व्यवस्था में कार्यरत उन लोगों को परेशान और हताश करती हैं जो 2008 में आर.टी.ई.एक्ट के लागू किए जाने के बाद उत्पन्न परिस्थिति का सामना करने का प्रयास कर रहे हैं। जो शिक्षक सफल होना चाहते हैं, वे उन बच्चों के साथ काम करने के लिए स्वयं अपनी सृजनशीलता और अन्तर्बोध पर निर्भर करते हैं, जो समान गणवेश (यूनीफॉर्म) पहनने के बावजूद दूसरे बच्चों से भिन्न दिखाई देते हैं। क्या वे बच्चे वाकई में भिन्न हैं? उनमें दूसरे बच्चों से क्या अन्तर है? क्या हमें उनको सबके साथ 'घुल–मिल जाने' के लिए अनुकूल बनाने की कोशिश करना चाहिए, या उन्हें भिन्न बने रहने देना चाहिए?

एक बच्चे को बड़े होने और सीखने के लिए ऐसे वातावरण की आवश्यकता होती है जहाँ उसकी सामाजिक तथा भावनात्मक जरूरतें पूरी होती हैं। ऐसा सहायक वातावरण निर्मित करने के लिए यह बेहद जरूरी है कि समुदाय के हर उस सदस्य को जो समावेश की प्रक्रिया में संलग्न है, समान प्रभाव वाला समझा जाए। इस समीकरण में कोई देने वाले और कोई लेने वाले नहीं होते, क्योंकि यह कोई दान की क्रिया नहीं है, बल्कि ऐसा काम है जो उसमें लगे सभी लोगों को लाभान्वित करता है। यदि इसके किसी एक भागीदार को दूसरे से बेहतर या बड़ा समझा जाता है तो समावेश के कार्य की बुनियादी अभिव्यक्ति को ही समझने में चूक हो जाती है।

स्कूल का परिवेश उस बच्चे के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वातावरण होता है जिसे समावेश के लिए चुना जाता है, और जो लोग समावेश की प्रक्रिया को सबसे अधिक प्रभावित करते हैं, वे हैं – बच्चा, माता–पिता (उस बच्चे के माता–पिता तथा अन्य विद्यार्थियों के माता–पिता), स्कूल का प्रशासन, स्कूल के सहयोगी कर्मचारी तथा शिक्षक। यही वह समुदाय है जिसके लिए समावेश के दर्शन को और उसके लागू किए जाने के कारणों को समझना तथा उनसे सहमत होना जरूरी है ताकि समावेश की प्रक्रिया जितनी सम्भव हो उतनी सुगमता से और कारगर ढंग से संपन्न हो सके।

यूनेस्को (2008) ने समावेश की राह में निम्न रुकावटों की सूची बनाई है: दृष्टिकोण सम्बन्धी कारक, भौतिक रुकावटें, पाठ्यक्रम, शिक्षकों के दृष्टिकोण तथा क्षमताएँ, भाषा तथा सम्प्रेषण, सामाजिक–आर्थिक कारक, वित्तीय संसाधन एवं शैक्षिक व्यवस्था का संगठन और नीतियाँ। हालाँकि इनमें से प्रत्येक महत्त्वपूर्ण है, पर इस लेख में मैं अपने को केवल दृष्टिकोण सम्बन्धी कारकों – जिनका सम्बन्ध स्कूल के दृष्टिकोण तथा माता–पिताओं के दृष्टिकोणों से होता है, भाषा तथा सम्प्रेषण, और सामाजिक–आर्थिक कारकों तक सीमित रखूँगी। ये किस प्रकार भारत में शिक्षा के अधिकार अधिनियम को लागू करने के सन्दर्भ में रुकावटों को निरूपित करते हैं?

समावेशी शिक्षा की सफलता इस बात से तय होती है कि समावेश की प्रक्रिया के प्रति तथा उस बच्चे के प्रति जिसका समावेश किया जाना है शिक्षकों का दृष्टिकोण

क्या है। इसके खिलाफ शिक्षकों का प्रतिरोध विभिन्न कारणों से हो सकता है। एक तो मुख्यधारा के शिक्षक यह महसूस करते हैं कि उनके पास शैक्षणिक चुनौतियाँ पेश करने वाले विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए आवश्यक कौशल नहीं होते, क्योंकि निर्धारित पाठ विभिन्न स्तरों पर पढ़ाए जाने के लिए निर्मित नहीं किए जाते। यह समस्या उनके इस अपराध बोध के कारण और जटिल हो जाती है कि किसी खास बच्चे पर, या कुछ खास बच्चों के समूह पर अलग से ध्यान देने पर दूसरे विद्यार्थियों को दिए जाने वाले शैक्षणिक समय की हानि होगी। समावेश के प्रति शिक्षकों के प्रतिरोध का एक अन्य सम्भावित कारण समावेश की उनकी गलत समझ और समावेश के प्रति उनका "दर्शन" होता है; कुछ शिक्षक समावेश को 'बच्चे को अन्य सभी बच्चों जैसा बना लेने' की प्रक्रिया की तरह देखते हैं, जबकि अन्य शिक्षक समावेश को एक ऐसा वातावरण प्रदान करने की तरह देख सकते हैं जिसमें भिन्न–भिन्न प्रकार की जरूरतों की पूर्ति हो सके।

जब पढ़ाने और सिखाने की सामग्री अँग्रेजी में होती है, तो जिस बच्चे को पहले से अँग्रेजी का कोई ज्ञान न हो उसे पाठ को समझने में और पाठ्यक्रम को अपनाने में बहुत कठिनाई होगी। अकसर, ऐसे बच्चों के लिए अँग्रेजी से उनका सामना केवल स्कूल में उनके शिक्षकों तथा उनके सहपाठियों के माध्यम से होगा। ऐसे बच्चे इस भाषा में उस तरह रचे–बसे नहीं होते जैसे कि उनके मध्यमवर्गीय सहपाठी होते हैं। ऐसा न होना इन बच्चों को विशाल शब्द भण्डार से वंचित रखता है। उनके मध्यमवर्गीय सहपाठी कहानी की किताबों के द्वारा, दूसरों (माता–पिताओं, दोस्तों) को अँग्रेजी में बात करते हुए सुनने के द्वारा, अँग्रेजी में टेलीविजन के कार्यक्रम या फिल्में देखने के द्वारा, या यहाँ तक कि अखबार में छपी हुई अँग्रेजी ही देखने के कारण अँग्रेजी से अच्छी तरह परिचित होते हैं। यदि उन बच्चों को समुचित सहायता प्रदान नहीं की जाती तो कक्षा में होने वाली पढ़ाई और उनके सीखने के बीच की खाई और चौड़ी होती चली जाएगी। इसके परिणामस्वरूप उन बच्चों से (अतिरिक्त कक्षाओं या निजी शिक्षण, ट्यूशन, के द्वारा) कक्षा के साथ 'कदम मिला लेने' की अपेक्षा की जाएगी, और उनकी कक्षा का शिक्षक अपने को इस चुनौती के नाकाबिल तथा हताश महसूस करेगा, और स्कूल में 7 घण्टे बिताने के दौरान बच्चे उससे अपने को कटा हुआ महसूस करेंगे।

इसके अलावा, मैंने अनुभव किया है कि जो बच्चे शिक्षा की माध्यम भाषा में निपुण नहीं होते और कक्षा के कामकाज में भाग नहीं लेते, उनके साथ उनके सहपाठियों द्वारा भी भेदभाव किया जाता है। छोटे बच्चे उन कहानियों का अभिनय करते हैं जो उन्होंने पढ़ी या टेलीविजन पर देखी होती हैं। उनके बीच में जो भी बच्चा कहानी, या उसकी 'भाषा' का प्रसंग नहीं समझता, वह अलग–थलग पड़ जाता है। एक दस साल की लड़की (जो सामाजिक तथा आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि की थी), जिसके साथ मैं काम कर रही थी, मध्यम वर्गीय बच्चों के साथ एक समावेशी कार्यक्रम में थी। उसे मित्र बनाने में बहुत कठिनाई होती थी। जब उससे पूछा गया कि उसे दूसरे बच्चों में क्या प्रमुख अन्तर लगता था, तो उसने कहा 'अँग्रेजी – वे अलग ढंग से बात करते हैं'।

हालाँकि यह स्पष्ट है कि जिन बच्चों को पहले से अँग्रेजी भाषा का ज्ञान नहीं होता उन्हें उस भाषा को सीखने के लिए सहायता की जरूरत पड़ेगी, परन्तु जिस प्रश्न का उत्तर देना सबसे कठिन है, वह है कि – इन बच्चों को हम वह अतिरिक्त सहायता कब दें, जिसकी उन्हें जरूरत है। शिक्षा व्यवस्था के लिए 'पाठ्यक्रम से इतर गतिविधियों (जैसे खेल–कूद या कला)' के समय का या मध्यान्ह भोजन के अवकाश का इन सहायता कक्षाओं के लिए उपयोग करना सुविधाजनक होगा। परन्तु, यह देखते हुए कि ऐसे बच्चों का उनके सहपाठियों के साथ एकीकरण ज्यादा करके पाठ्यक्रम से इतर गतिविधियों के माहौल में ही सम्भव हो पाता है, क्योंकि शायद ऐसे अवसरों के दौरान ही उनको परिस्थिति थोड़ी अधिक बराबरी वाली लगती है, क्या हमें, इसके निहित परिणामों को जानते हुए भी, उन्हें इस समय (और सहपाठियों के साथ मेलजोल के अवसरों) से वंचित करना चाहिए?

किसी बच्ची का पेंसिल बॉक्स किस तरह का है, उसके बाल सँवारने का ढंग कैसा है, उसने किस तरह के जूते पहने हुए हैं, वह घर से किस तरह की खाने की चीजें नाश्ते या मध्यान्ह भोजन के लिए लाती है, ये सभी बातें उस बच्ची की सांस्कृतिक तथा सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि की सूचक होती हैं और वे मध्यमवर्गीय बच्चों से भरी कक्षा में भेदभाव का कारण बन जाती हैं। बच्चे इन चीजों के अन्तरों का निरीक्षण करते हैं। यदि ये अन्तर 'सामान्य भिन्नताओं' की तरह समझे और स्वीकार नहीं किए जाते, तो वे भेदभाव और दुष्टतापूर्वक तंग करने के कारक बन जाते हैं।

स्कूल में प्रदान की जाने वाली विभिन्न प्रकार की सुविधाओं से सहज रूप से परिचित होना (या न होना) भी

ऐसी रुकावटें निर्मित कर सकता है जो आसानी से पहचान में नहीं आतीं। ऐसे छोटे बच्चे जो घर पर कमोड (पश्चिमी शैली का शौचालय) का इस्तेमाल नहीं करते, वे स्कूल में भी उसके उपयोग से परिचित नहीं होते, जिसकी वजह से उनके द्वारा गलती से गंदगी या पानी फैलना जैसी बातें हो सकती हैं, जो उनके सहपाठियों और अन्य लोगों को दिखाई दे जाती हैं। इसका परिणाम, वयस्कों द्वारा उनके प्रति दयाभाव दिखाए जाने या नापसंदगी से देखे जाने के अलावा, उनके सहपाठियों द्वारा उन्हें दुष्टतापूर्वक तंग करना, अपशब्द कहना, व्यंग्यपूर्ण नामों से उनका मजाक उड़ाना और बाद में उनका सामाजिक बहिष्कार तक हो सकता है। अपने सहपाठियों से बच्चों का अलगाव हो जाने के परिणामस्वरूप सामाजिक कठिनाइयाँ पैदा होती हैं जो उनके आत्म–सम्मान को भी प्रभावित करती हैं। समावेश की राह में इस प्रकार की रुकावटों को पहचानने की जिम्मेदारी स्कूल में काम करने वाले संवेदनशील लोगों पर आ जाती है।

भारतीय समाज में (निचली जातियों में जन्म या सामाजिक–आर्थिक स्थिति के कारण) कमजोर समूहों के खिलाफ वर्ग और जाति के पक्षपात के फलस्वरूप ऐसे दृष्टिकोण निर्मित होते हैं जो भेदभाव करते हैं और वंचित समूहों पर पूर्वाग्रह ग्रस्त छवियाँ आरोपित करते हैं। मध्यम वर्गीय बच्चों के माता–पिताओं की यह आम धारणा होती है कि सुविधाओं से वंचित परिवारों से आने वाले बच्चों का आचरण फर्क होता है, और वे उन चीजों को हथिया लेंगे जो उनकी नहीं होती। और यह भी कि ऐसे बच्चों को उनके घरों में सही और गलत के बुनियादी मूल्यों की शिक्षा नहीं मिलती, वे बीमारियों के वाहक होते हैं और उन्हें साफ–सफाई की बुनियादी बातों की समझ नहीं होती। जो माता–पिता (शुक्र है कि सभी नहीं) अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजते हैं, वे अपने (स्वच्छ, स्वस्थ और 'नैतिक रूप से दोषरहित' तथा 'अच्छे आचरण वाले' –जो न झूठ बोलें, न चोरी करें, न गंदी भाषा इस्तेमाल करें, न आक्रामक हों) बच्चों के प्रतिदिन 7 घण्टे ऐसे बच्चों के साथ बिताने, जिनमें ऐसे सद्‌गुण नहीं होते, के विचार मात्र से अपेक्षित बेचैनी और क्षोभ से प्रतिक्रिया करते हैं। कार्यरूप में इसका परिणाम यह होता है कि वे आर.टी.ई. एक्ट के माध्यम से आने वाले बच्चों के खिलाफ अपने बच्चों के मन में एक दृष्टिगत पक्षपात की धारणा बैठा देते हैं। इस तरह का पक्षपात हमारे शिक्षकों में भी मौजूद रहता है, जो आखिरकार उसी संस्कृति का हिस्सा होते हैं।

खुले और निरन्तर चलने वाले संवाद उन सब लोगों की पहुँच में होना चाहिए जो समावेश की प्रक्रिया में संलग्न हैं। जो स्कूल उन पालकों के प्रति संवेदनशील नहीं हैं जो पूरी तरह साक्षर हैं या वे जो अँग्रेजी में पढ़ना और लिखना नहीं जानते, उन स्कूलों के प्रमुख ऐसे पालकों को न तो कोई सहायता प्रदान करेंगे न ही उन्हें यह विश्वास दिला पाएँगे कि वे भी समावेश की प्रक्रिया का हिस्सा हैं। जो माता–पिता अँग्रेजी से सुपरिचित नहीं हैं, उन्हें स्कूल कार्यक्रमों (जैसे कि वार्षिक दिवस) से बाहर रखकर उनके भिन्न होने का एहसास दिलाया जाता है, जो उनके और उनके बच्चों की अलगाव की भावना को और बढ़ा देता है। एक शिक्षक को यह ख्याल आया कि अँग्रेजी में कमजोर पालकों को सभी संवादों में शामिल करना सुनिश्चित करने के लिए स्थानीय भाषा में निपुण किसी पालक (आर.टी.ई. द्वारा प्रवेश पाने वाले किसी बच्चे का नहीं) को दुभाषिए की तरह नियुक्त कर दिया जाए। इस तरह के सरल उपाय संवाद की खाई को पाटने में सहायक हो सकते हैं।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम के माध्यम से ऐसे स्कूलों में प्रवेश पाने वाले बच्चों में से कुछ के माता–पिता ने अपनी यह आशंका जताई है कि उनके बच्चों को भिन्न महसूस करवाया जाएगा। ऐसे पालकों को उन सहायक उपायों को जानने और समझने की जरूरत है जिनका प्रावधान उनके बच्चों के लिए किया गया है, अर्थात उनके बच्चों की जरूरतों को कब और कैसे पूरा किया जाएगा। इसके अलावा उन्हें अपने बच्चों की शिक्षा में उनके द्वारा दिए जाने वाले योगदान (न केवल बच्चों को पढ़ने और अपना गृहकार्य करने के लिए स्थूल रूप से जगह मुहैया कराने, बल्कि स्कूल की प्रक्रियाओं और गतिविधियों में उनकी सक्रिय भागीदारी में मदद करने) का महत्त्व समझने की भी जरूरत है। अकसर वे केवल इस बात के लिए कृतज्ञ भर होते हैं कि उनके बच्चे को ऐसी शिक्षा प्राप्त हो रही है जो अन्यथा उसके लिए सम्भव नहीं हो पाती। कृतज्ञता का यह भाव और उसके साथ ही पालकों की तरह अपने बच्चे की शिक्षा में दखल देने के प्रति झिझक उनको इस प्रक्रिया में बराबर के भागीदार बनने के लिए सशक्त नहीं बनने देते। परन्तु, पालकों को शिक्षा व्यवस्था में सामाजिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा व्यक्तिगत रूप से शामिल होने का हक है।

हम वास्तविक समावेश को अपना लक्ष्य बनाना चाहते हैं, पर क्या हम उन बाधाओं और अवरोधों से पार पा सकेंगे जो इसके मार्ग में आती हैं? क्या हम पक्षपातों वाले

दृष्टिकोणों को बदलने, सभी प्रकार के अन्तरों के प्रति संवेदनशील होने और उनके बारे में पूर्वाग्रहों से ग्रस्त निर्णय लेने के बजाय उनको सराहने में सक्षम हो सकेंगे? क्या हम समावेश की प्रक्रिया को सुगम बनाने और कमजोर वर्गों के इन असुरक्षित बच्चों के आत्मबोध को क्षति पहुँचाए बगैर उन्हें सफलतापूर्वक बुनियादी स्कूली शिक्षा दिलवा सकेंगे?

References

- Audette, B & Algozine,B (1997). "Re-inventing Government? Let's Reinvent Special Education," Journal of Learning Disabilities 30.
- Reddy, A. N., and Sinha, S. (2010). School Dropouts or Pushouts? Overcoming Barriers for the Right to Education. CREATE PATHWAYS TO ACCESS. Research Monograph No. 40 from http://files.eric.ed.gov/
- Slee, Roger (2001) Social justice and the changing directions in educational research: the case of inclusive education, International Journal of Inclusive Education, 5:2-3, 167-177, DOI: 10.1080/13603110010035832
- United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization. (2008).Barriers to inclusive education. Retrieved April 6, 2010, from www.unescobkk.org/education/appeal/programme-themes/inclusive-education/thematic-issues/barriers-to-inclusive-education/
- York, J.,Vandercook, T., MacDonald, C., Heise-Neff, C., & Caughey, E(1992). Feedback about integrating middle-school students with severe disabilities in general education classes. Exceptional Child, 58 (3): 244-58

ऐनी जॉन पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त एक नैदानिक मनौवैज्ञानिक (क्लीनिकल साइकोलॉजिस्ट) हैं। वे दो दशक से भी अधिक समय से माल्या अदिति इण्टरनेशनल स्कूल, बेंगलूरु में विशेष शिक्षाविद तथा स्कूल की मनौवैज्ञानिक के रूप में कार्यरत हैं। सकारात्मक मनोविज्ञान तथा बच्चों में परिस्थितियों के प्रति लचीलापन विकसित करना उनकी रुचि के क्षेत्रों में शामिल हैं। उनसे mais.annie@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : भरत त्रिपाठी